Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Vol. 13, Issue 2 | November 2025 - April 2026 | pp. 15-22

राजस्थान की 15वीं विधानसभा के संदर्भ में प्रथम बार निर्वाचित विधायकों के निर्णय-निर्माण एवं व्यवहार पर दलगत अनुशासन का प्रभाव

कैलाश चन्द यादव

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान, शोध केंद्र, राजकीय महाविद्यालय बूंदी (राजस्थान)

डॉ. विकास कुमार शर्मा

शोध पर्यवेक्षक, सह आचार्य, राजनीति विज्ञान, स्वर्गीय पंडित नवल किशोर शर्मा राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दौसा (राजस्थान)

शोध सारांश

यह शोध-पत्र राजस्थान की 15वीं विधानसभा के संदर्भ में पहली बार चुने गए विधायकों के फैसलों और उनके व्यवहार पर दलगत अनुशासन के प्रभाव को समझने की कोशिश करता है। शोध-पत्र से यह सामने आता है कि नए विधायक अनुभव की कमी और पार्टी के निर्देशों के कारण स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने में असमर्थ रहते हैं। वे अपने क्षेत्र की समस्याएँ उठाते समय भी सावधानी रखते हैं और अधिकतर पार्टी की दिशा के अनुसार ही काम करते हैं। इसके विपरीत, अनुभवी विधायक ज्यादा आत्मविश्वास के साथ फैसले लेते हैं और अपनी भूमिका को बेहतर तरीके से निभाते हैं। इस तरह दलगत अनुशासन नए विधायकों के व्यवहार और फैसलों को एक तय ढाँचे में ढाल देता है। यह पूरा शोध-पत्र दिखाता है कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया में विधायक की भूमिका व्यक्तिगत नहीं होती है। वह दल और परिस्थितियों के साथ मिलकर बनती है।

संकेताक्षर—*राजस्थान विधानसभा, दलगत अनुशासन, निर्णय-निर्माण, विधायक व्यवहार*

प्रस्तावना

लोकतांत्रिक व्यवस्था में विधायिका वह संस्था है जहाँ जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधि शासन और नीतियों से जुड़े निर्णयों में भाग लेते हैं। इन प्रतिनिधियों का कार्य केवल व्यक्तिगत विचारों तक सीमित नहीं रहता। वे राजनीतिक दलों के सदस्य के रूप में भी अपनी भूमिका निभाते हैं।[1] संसदीय प्रणाली में 'दलगत अनुशासन' एक महत्वपूर्ण व्यवस्था है, जो विधायकों के कार्य करने के तरीके को एक दिशा देता है। यह अनुशासन उनके विचार, वक्तव्य और निर्णय लेने की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। विशेष रूप से पहली बार निर्वाचित होने वाले विधायक इस व्यवस्था को समझने और अपनाने की प्रक्रिया में रहते हैं। उनके सामने सदन की कार्यप्रणाली और दल की अपेक्षाओं के अनुरूप स्वयं को ढालने की स्थिति रहती है। इस संदर्भ में यह जानना आवश्यक हो जाता है कि नए विधायक इस राजनीतिक ढाँचे में किस प्रकार कार्य करते हैं।

इसी संदर्भ में राजस्थान की 15वीं विधानसभा का उदाहरण इस विषय को समझने के लिए महत्वपूर्ण है, जहाँ विभिन्न दलों और क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व देखने को मिलता है। इस विधानसभा में पहली बार चुने गए विधायकों की उपस्थिति भी उल्लेखनीय रही, जिनके सामने नई परिस्थितियाँ और जिम्मेदारियाँ थीं। सदन में कार्य करते समय उन्हें अपने क्षेत्र के हितों और दल की दिशा दोनों को ध्यान में रखना पड़ता है। ऐसी स्थिति में उनके निर्णय और व्यवहार पर दलगत अनुशासन का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।[2] नए विधायक अपने अनुभव को बढ़ाते हुए धीरे-धीरे इस प्रक्रिया में सक्रिय होते हैं और अपने कार्य करने के तरीके को उसी के अनुसार विकसित करते हैं। उनके कार्यों और व्यवहार के

माध्यम से यह समझ बनती है कि विधायिका में भूमिका दल और परिस्थितियों के साथ जुड़ी होती है।

साहित्य समीक्षा

इस विषय को समझने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि पहले उन प्रमुख अध्ययनों और विचारों को देखा जाए जिनमें भारतीय राजनीति, दलगत अनुशासन और विधायकों की भूमिका पर चर्चा की गई है। विभिन्न विद्वानों ने राजनीतिक दलों की संरचना, विधायी कार्यप्रणाली और प्रतिनिधित्व के स्वरूप को अलग-अलग दृष्टिकोण से समझाने का प्रयास किया है। इसी पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए इस शोध-पत्र में उन प्रमुख अध्ययनों का संक्षिप्त अवलोकन प्रस्तुत किया जा रहा है, जिनसे इस विषय की समझ और अधिक स्पष्ट होती है —

"हमारी संसद", सुभाष कश्यप (2016) द्वारा लिखित कृति—यह किताब भारतीय संसद की संरचना और जनप्रतिनिधियों के काम करने के तरीके को सरल रूप में समझाती है और बताती है कि विधायिका में फैसले दल के आधार पर लिए जाते हैं, जहाँ अनुशासन की अहम भूमिका होती है। कश्यप बताते हैं कि—"संसदीय व्यवस्था में दल का अनुशासन ऐसा तंत्र है जो प्रतिनिधियों के विचार और व्यवहार को एक दिशा में बनाए रखता है, खासकर उन लोगों के लिए जो पहली बार सदन में आते हैं।"[3]

इस स्थिति में नए विधायक अनुभव की कमी के कारण संसदीय नियमों और दल की अपेक्षाओं के बीच संतुलन बनाने के लिए अक्सर पार्टी के निर्देशों का पालन करते हैं, जिससे उनकी स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता कुछ हद तक सीमित हो जाती है। कश्यप का विश्लेषण यह समझने में मदद करता है कि दल का ढांचा किस तरह नए प्रतिनिधियों को धीरे-धीरे अपने अनुसार ढालता है और उनके व्यवहार को नियंत्रित करता है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि पहली बार चुने गए विधायकों के निर्णय और व्यवहार को समझने के लिए दलगत अनुशासन को एक मुख्य कारक के रूप में देखना जरूरी है।[4]

"भारतीय राज्यों की राजनीति : संरचना, प्रक्रिया और परिवर्तन", खुशवीर सिंह (2021) द्वारा लिखित पुस्तक—यह पुस्तक राज्य स्तर की राजनीति, दलों की भूमिका और विधायकों के काम करने के तरीके को सरल रूप में समझाती है और बताती है कि विधानसभा में फैसले कैसे मिलकर लिए जाते हैं और दल किस तरह उन्हें नियंत्रित करते हैं। इसके आधार पर समझ आता है कि राज्य की राजनीति में दलगत अनुशासन विधायकों के निर्णय और व्यवहार को लगातार प्रभावित करता है, खासकर उन विधायकों को जो पहली बार चुने जाते हैं।[5] सिंह का विश्लेषण यह दिखाता है कि विधानसभा में काम करते समय पहली बार चुने गए विधायक अपने व्यवहार, वक्तव्य और फैसलों को इस तरह ढालते हैं कि वे दल की अपेक्षाओं के अनुसार हों। इस प्रकार यह कृति इस विषय को समझने के लिए एक मजबूत आधार देती है।

"राजनीति विज्ञान : एक समग्र अध्ययन", राजेश मिश्रा (2022) द्वारा लिखित कृति—यह पुस्तक लोकतांत्रिक व्यवस्था में राजनीतिक दलों, प्रतिनिधित्व और निर्णय लेने की प्रक्रिया को सरल रूप में समझाती है और बताती है कि जनप्रतिनिधियों का व्यवहार किस तरह संस्थागत और दलगत ढाँचे से प्रभावित होता है। किताब में 'राजेश मिश्रा' कहते भी है कि—"राज्य स्तर की विधायिका में काम करने वाले विधायक पूरी तरह स्वतंत्र नहीं होते। वह दल के सदस्य के रूप में ही सक्रिय रहते हैं, जहाँ उनके फैसलों और व्यवहार पर दल का प्रभाव बना रहता है।"[6]

इस कथन से स्पष्ट है कि उनके फैसलों में व्यक्तिगत पहल कम दिखाई देती है और वे अधिकतर पार्टी की दिशा में ही काम करते हैं, जिससे उनका व्यवहार नियंत्रित और संतुलित बनता है। इस तरह मिश्रा की यह कृति इस शोध विषय को समझने में मदद करती है, जहाँ नए विधायकों के निर्णय और व्यवहार को दलगत अनुशासन के प्रभाव के रूप में देखा जा सकता है।

"राजस्थान की राजनीतिः सामंतवाद से जातिवाद के भंवर में", विजय भंडारी (2023) द्वारा लिखित अध्ययन—यह अध्ययन राजस्थान की राजनीति के सामाजिक आधार, शक्ति संरचना और दलों के काम करने के तरीके को सरल रूप में समझाता है और दिखाता है कि राज्य की राजनीति में दल किस तरह अपने प्रतिनिधियों के व्यवहार और फैसलों को प्रभावित करते हैं। इस संदर्भ में भंडारी का विश्लेषण यह समझने में मदद करता है कि राजस्थान की विधानसभा में काम करने वाले पहली बार चुने गए विधायक दल की व्यवस्था और उसके अनुशासन के अनुसार अपने व्यवहार को ढालते हैं।[7] नए

विधायक सामाजिक और राजनीतिक दबावों के बीच काम करते हुए अपने फैसलों में सावधानी रखते हैं और दल की अपेक्षाओं के अनुसार ही अपनी भूमिका निभाते हैं, जिससे उनकी स्वतंत्रता सीमित दिखाई देती है। इस तरह भंडारी की यह कृति इस विषय को समझने में मदद करती है, जहाँ पहली बार चुने गए विधायकों के निर्णय और व्यवहार को दलगत अनुशासन के प्रभाव में देखा जा सकता है।

राजस्थान की 15वीं विधानसभा : संरचना एवं राजनीतिक परिदृश्य

राजस्थान की 15वीं विधानसभा का गठन वर्ष 2018 के चुनावों के बाद हुआ, जिसमें राज्य की राजनीति में एक बड़ा बदलाव देखने को मिला। कुल 200 सीटों में से काँग्रेस को 100 सीटें मिलीं, जबकि भाजपा को 73 सीटें प्राप्त हुईं और बाकी सीटों पर अन्य दलों व निर्दलीय उम्मीदवार जीते।[8] इस स्थिति में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस को पूरा बहुमत नहीं मिला, लेकिन बाद में अन्य दलों और निर्दलीय विधायकों के समर्थन से उसने सरकार बना ली। मुख्यमंत्री के रूप में 'अशोक गहलोत' ने जिम्मेदारी संभाली। इस दौरान विधानसभा की 144 बैठकें हुईं, जिससे इसकी सक्रियता स्पष्ट होती है। साथ ही, राज्य में हर पाँच साल में सत्ता बदलने की परंपरा इस बार भी जारी रही, जहाँ भाजपा की जगह काँग्रेस सत्ता में आई। यह स्थिति दिखाती है कि विधानसभा में सहयोग, समर्थन और नेतृत्व भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।[9] जिसे नीचे दी गई तालिका के माध्यम से और स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है—

तालिका 1 : राजस्थान की 15वीं विधानसभा (2018-2023) की राजनीतिक स्थिति एवं संरचना के प्रमुख तत्व

पहलू	विवरण
सरकार का गठन	भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस ने अन्य दलों व निर्दलियों के समर्थन से सरकार बनाई
मुख्यमंत्री	अशोक गहलोत
विपक्ष की भूमिका	भारतीय जनता पार्टी प्रमुख विपक्ष के रूप में रही
विधानसभा अध्यक्ष	सी.पी. जोशी
राजनीतिक स्थिति	सत्ता परिवर्तन की परंपरा जारी रही (भारतीय जनता पार्टी से भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस)
समर्थन का आधार	निर्दलीय और छोटे दलों का सहयोग महत्वपूर्ण रहा

स्रोतः शोधार्थी द्वारा संकलित की गई जानकारी

इसी तरह यदि इस राजनीतिक स्थिति को थोड़ा और ध्यान से देखा जाए, तो साफ होता है कि इस विधानसभा में कई छोटे दलों और अलग-अलग क्षेत्रों की भागीदारी रही। लगभग 13 निर्दलीय और छोटे दलों के विधायकों का समर्थन सरकार को स्थिर बनाए रखने में बहुत जरूरी रहा, जिससे यह समझ आता है कि पूरी सत्ता किसी एक दल के हाथ में नहीं थी। साथ ही 'मेवाड़', 'मारवाड़', 'हाड़ौती' और 'पूर्वी राजस्थान' जैसे क्षेत्रों में अलग-अलग दलों का प्रभाव दिखा, जिससे विधानसभा का रूप संतुलित और विविध बना। इस विविधता का असर विधायकों के फैसलों और उनके व्यवहार पर भी पड़ा, जिससे उन्हें अपने क्षेत्र के हित और अपने दल की अपेक्षाओं के बीच संतुलन बनाना पड़ा।[10] यही स्थिति आगे चलकर दलगत अनुशासन को और अधिक जरूरी बना देती है।

दलगत अनुशासन की प्रकृति एवं कार्यप्रणाली

राजस्थान की 15वीं विधानसभा के संदर्भ में दलगत अनुशासन केवल नियमों तक सीमित नहीं था। यह रोजमर्रा के राजनीतिक कामकाज में साफ दिखाई देता था। जब काँग्रेस ने 100 सीटें लेकर सरकार बनाई और उसे निर्दलियों तथा छोटे दलों के समर्थन की जरूरत पड़ी, तब अपने विधायकों को एकजुट रखना उसके लिए और भी जरूरी हो गया। ऐसी स्थिति में दल अपने विधायकों को साफ निर्देश देते थे कि सदन में किस मुद्दे पर क्या रुख रखना है। खासकर जब सरकार समर्थन पर टिकी हो, तब किसी एक विधायक का अलग फैसला भी सरकार को प्रभावित कर सकता है।[11] इसी कारण विधायक अपनी व्यक्तिगत राय को पीछे रखकर सामूहिक निर्णय का पालन करते थे। उदाहरण के रूप में, काँग्रेस के कई नए विधायक जैसे—'आमीन कागजी', 'दानिश अबरार' और 'मनीषा पंवार'

सदन में पार्टी की लाइन के अनुसार ही सक्रिय दिखाई देते हैं, जिससे साफ होता है कि दलगत अनुशासन उनके व्यवहार का हिस्सा बन जाता है।

इसी तरह जब इसकी कार्यप्रणाली को देखा जाए, तो यह पूरी राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित करती है। दल अपने विधायकों के साथ नियमित बैठकों, अंदरूनी चर्चाओं और साफ निर्देशों के माध्यम से यह तय करते हैं कि किस मुद्दे पर क्या बोलना है और कैसे समर्थन या विरोध करना है। यह व्यवस्था खासकर उन विधायकों पर ज्यादा असर डालती है जो पहली बार चुने जाते हैं। अपने अनुभव की कमी के कारण वे पार्टी पर अधिक निर्भर रहते हैं। जैसे—'मारवाड़', 'ढूँढाड़' और 'मेवाड़–वागड़' क्षेत्रों से आए प्रथम बार निर्वाचित विधायक अलग-अलग सामाजिक पृष्ठभूमि से होने के बावजूद सदन में एक जैसा दलगत रुख अपनाते दिखाई देते हैं, जिससे इस अनुशासन की कार्यप्रणाली साफ समझ आती है। इस तरह दलगत अनुशासन केवल निर्देश देने तक सीमित रहने की बजाय एक ऐसा तंत्र बन जाता है जो विधायकों के फैसलों और उनके व्यवहार दोनों को प्रभावित करता है।[12] यही आगे निर्णय लेने की प्रक्रिया पर इसके प्रभाव को समझने का आधार बनता है।

निर्णय-निर्माण प्रक्रिया पर दलगत अनुशासन का प्रभाव

राजस्थान की 15वीं विधानसभा में कई मौके ऐसे आए जब फैसले लेने की प्रक्रिया पर दलगत अनुशासन का सीधा असर देखा गया। जब सरकार को बहुमत बनाए रखने के लिए सहयोगी विधायकों की जरूरत थी, तब बजट पारित करने और वित्तीय प्रस्तावों पर मतदान जैसे महत्वपूर्ण मामलों में सभी विधायकों को एक साथ रहना पड़ता है।[13] उदाहरण के लिए, बजट सत्र के दौरान काँग्रेस के प्रथम बार निर्वाचित विधायक जैसे—'दानिश अबरार' (सवाई माधोपुर), 'दीपचन्द खैरिया' (किशनगढ़ बास) और 'प्रशांत बैरवा' (निवाई) ने अपने क्षेत्र के मुद्दों के बावजूद पार्टी के पक्ष में ही मतदान किया। इसी तरह विकास और कल्याण से जुड़े प्रस्तावों पर भी विधायक अपनी व्यक्तिगत राय से हटकर सामूहिक निर्णय का पालन करते दिखे, क्योंकि इनसे सरकार की स्थिरता भी जुड़ी होती है। इससे साफ होता है कि महत्वपूर्ण नीतिगत फैसलों में दलगत अनुशासन ने विधायकों की स्वतंत्र सोच को कुछ हद तक सीमित किया और फैसलों को एक दिशा में बनाए रखा।

इसी प्रभाव को दूसरे तरह के फैसलों में भी देखा जा सकता है, जैसे—अविश्वास प्रस्ताव, विधेयकों पर चर्चा और विपक्ष के विरोध के समय। जब विपक्ष सरकार को चुनौती देता था, तब राष्ट्रीय काँग्रेस पार्टी और भारतीय जनता पार्टी दोनों ही अपने-अपने विधायकों को एकजुट रखते थे। जैसे—भारतीय जनता पार्टी के विधायक 'कालूराम' (झालावाड़) और 'संजय शर्मा' (अलवर) विपक्ष में रहते हुए एक जैसा रुख अपनाते थे, वहीं सत्तापक्ष के विधायक भी उसी तरह एक साथ दिखाई देते थे। इसके अलावा पानी, सड़क और रोजगार जैसे स्थानीय मुद्दों पर भी कई विधायक पार्टी की प्राथमिकताओं के कारण अपनी व्यक्तिगत बात खुलकर नहीं रख पाते थे। इससे यह स्थिति बनती है कि विधायक पहले यह देखते हैं कि पार्टी क्या चाहती है और उसी के अनुसार अपना रुख तय करते हैं। इस तरह निर्णय लेने की प्रक्रिया में दलगत अनुशासन एक नियंत्रक शक्ति की तरह काम करता है, जो आगे चलकर विधायकों के व्यवहार को भी प्रभावित करता है।[14]

विधायकों के व्यवहार पर दलगत अनुशासन का प्रभाव

राजस्थान की 15वीं विधानसभा में दलगत अनुशासन का असर सबसे ज्यादा तब दिखता है जब विधायक अपनी निजी असहमति होने के बावजूद उसे खुलकर सामने नहीं रखते। कई बार ऐसा होता था कि पानी की कमी, सड़क या स्थानीय प्रशासन से जुड़ी समस्याएँ उनके सामने होती थीं, फिर भी वे सीधे तौर पर सरकार या अपने ही दल के फैसलों की खुलकर आलोचना नहीं करते थे। उदाहरण के रूप में, जोधपुर क्षेत्र के विधायक 'महेन्द्र बिश्नोई' या 'मीना कंवर' अपने क्षेत्र की समस्याओं को उठाते समय ऐसी भाषा का उपयोग करते थे जिसमें आलोचना कम और समर्थन ज्यादा दिखता था। इसी तरह जयपुर क्षेत्र के विधायक 'आमीन कागजी' या 'वेदप्रकाश सोलंकी' भी शहरी मुद्दों पर बोलते समय टकराव वाली भाषा से बचते थे। इससे समझ आता है कि विधायक अपने व्यवहार को इस तरह सँभालते हैं कि वे अपने क्षेत्र की बात भी रख सकें और पार्टी के खिलाफ भी न जाएँ। इस प्रक्रिया में उनका व्यवहार संतुलित हो जाता है, जहाँ वे न पूरी तरह स्वतंत्र दिखते हैं और न ही पूरी तरह दबे हुए लगते हैं।

इसी प्रभाव को और ध्यान से देखें तो यह विधायकों की शारीरिक भाषा और सदन में उनके व्यवहार में भी दिखाई देता है। जब सदन में किसी मुद्दे पर तनाव या हंगामा होता था, तब कई विधायक अपनी व्यक्तिगत प्रतिक्रिया देने के बजाय अपने दल के साथ खड़े दिखाई देते थे। उदाहरण के लिए, भाजपा के विधायक 'सतीश पूनियाँ' (आमेर) और 'संजय शर्मा' (अलवर) विरोध के समय एक साथ नारेबाजी करते थे, वहीं काँग्रेस के विधायक 'दानिश अबरार' और 'रफीक खान' उसी समय शांत रहकर सरकार का समर्थन करते दिखते थे। इस स्थिति में विधायक का व्यवहार अपने आप समूह के अनुसार ढल जाता है, चाहे उसकी अपनी सोच कुछ भी हो। इसके अलावा कई प्रथम बार निर्वाचित विधायक 'प्रशांत बैरवा' या 'दीपचन्द खैरिया' सदन में कम बोलते हुए ज्यादा समय वरिष्ठ नेताओं को सुनते हुए दिखाई देते थे, जिससे यह समझ आता है कि वे पहले पार्टी के तरीके को सीखते हैं और फिर उसी के अनुसार खुद को ढालते हैं।

इसी क्रम में दलगत अनुशासन का असर विधायकों के रोजमर्रा के राजनीतिक व्यवहार में भी दिखाई देता है। विधायक प्रेस के सामने क्या बोलेंगे, जनता के बीच किन मुद्दों को महत्व देंगे और किन बातों पर चुप रहेंगे, यह काफी हद तक पार्टी की दिशा से तय होता है।[15] उदाहरण के रूप में, पूर्वी राजस्थान के विधायक जैसे—'रोहित बोहरा' (धौलपुर) या 'संदीप कुमार' (तिजारा) अपने क्षेत्र की समस्याएँ उठाते समय भी सरकार के खिलाफ सीधे बोलने से बचते थे। वहीं मेवाड़ क्षेत्र के विधायक जैसे—'रमिला खड़ीया' और 'हरेन्द्र निनामा' अपने जनजातीय मुद्दों को पार्टी की नीति के साथ जोड़कर रखते थे। इस तरह धीरे-धीरे विधायक अपनी व्यक्तिगत पहचान से ज्यादा अपने दल के अनुसार व्यवहार करने लगते हैं। यही कारण है कि उनका आचरण एक जैसा और नियंत्रित दिखाई देता है और यही स्थिति आगे दलगत अनुशासन और लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व का संबंध को समझने का आधार बनती है।

दलगत अनुशासन और लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व का संबंध

राजस्थान की 15वीं विधानसभा में प्रतिनिधित्व को समझने पर यह साफ दिखता है कि विधायक चुनाव के समय अपने क्षेत्र और जनता के मुद्दों के साथ पूरी तरह जुड़े रहते हैं, लेकिन सदन में उनकी भूमिका बदलने लगती है। उदाहरण के तौर पर, राष्ट्रीय काँग्रेस पार्टी के 'अमित चाचाण', 'इन्द्राज सिंह' या भारतीय जनता पार्टी की 'कल्पना देवी' अपने क्षेत्र में सीधे जनता से मिलती हैं, उनकी समस्याएँ सुनती है और एक सक्रिय नेता के रूप में सामने आते हैं। मगर जब वे सदन में बोलते हैं, तो उनकी भाषा और तरीका बदल जाता है, जहाँ वे अपनी बात इस तरह रखते हैं कि वह पार्टी की सोच के अनुसार हो। इस स्थिति में उनके व्यवहार में बदलाव दिखाई देता है। वे सीधे बोलने के बजाय संतुलित और संयमित तरीके से अपनी बात रखते हैं। इससे समझ आता है कि प्रतिनिधित्व केवल मुद्दे उठाने तक सीमित नहीं होता है। उसमें यह भी जरूरी होता है कि उन मुद्दों को किस तरीके से प्रस्तुत किया जाए।[16]

इसी स्थिति में टकराव विचारों के साथ-साथ भूमिका का भी बन जाता है। उदाहरण के तौर पर, मारवाड़ क्षेत्र का विधायक अपने इलाके में पानी की समस्या को लेकर दबाव में रहता है, लेकिन सदन में उसे यह भी देखना होता है कि वह इस मुद्दे को किस तरह और कितनी मजबूती से उठाए। इसी तरह ढूँढाड़ क्षेत्र के विधायक जब स्थानीय प्रशासन की कमी पर बोलते हैं, तो वे अपने शब्द इस तरह चुनते हैं कि बात भी कह दी जाए और टकराव भी न हो। इस प्रक्रिया में उनके संबंध और संपर्क भी काम आते हैं, जहाँ वे सीधे विरोध करने के बजाय बातचीत और आपसी समझ से समाधान निकालने की कोशिश करते हैं। इस तरह विधायक की भूमिका केवल बोलने तक सीमित नहीं होती है। वह अपने व्यवहार और संबंधों के जरिए संतुलन बनाने का भी काम करती है।

इसी क्रम में यह भी देखा जाता है कि कई बार विधायक अपने क्षेत्र के छोटे मुद्दों को पीछे रखकर बड़े राजनीतिक विषयों में ज्यादा सक्रिय हो जाते हैं, जिससे उनकी प्राथमिकताएँ बदलती हुई दिखाई देती हैं।[17] उदाहरण के तौर पर, शहरी क्षेत्रों के विधायक जैसे—'सुभाष गर्ग' या 'सन्तोष' कई बार दल के दबाव में आकर स्थानीय समस्याओं के बजाय राज्य स्तर के मुद्दों पर अधिक ध्यान देते हैं। इस स्थिति में उनका निर्णय केवल मुद्दे पर आधारित नहीं होता, अपितु इस बात पर भी निर्भर करता है कि उस समय उनकी भूमिका उनसे क्या अपेक्षा करती है। फिर भी वे अपने क्षेत्र से पूरी तरह अलग नहीं होते। वे सीमित रूप में अपने मुद्दों को भी साथ जोड़ते रहते हैं। इस

तरह एक संतुलन बनता है, जहाँ दलगत अनुशासन व्यवस्था को बनाए रखता है और विधायक अपनी भूमिका को उसी ढाँचे में ढालकर काम करता है, जो आगे उनकी चुनौतियों और सीमाओं को समझने की दिशा तय करता है।

प्रथम बार निर्वाचित विधायकों की चुनौतियाँ एवं सीमाएँ

राजस्थान की 15वीं विधानसभा में पहली बार चुने गए विधायकों की स्थिति को समझने पर यह साफ होता है कि उनका काम एक जटिल राजनीतिक माहौल में अपनी भूमिका तय करना होता है।[18] सदन की कार्यप्रणाली, दल की अपेक्षाएँ और अपने क्षेत्र की जिम्मेदारियाँ एक साथ उनके सामने होती हैं, जिससे उनकी भूमिका और कठिन हो जाती है। नए विधायक एक तरफ सीखने की प्रक्रिया में होते हैं और दूसरी तरफ उनसे सक्रिय रहने की उम्मीद भी की जाती है।[19] इस कारण उनका अनुभव, आत्मविश्वास और निर्णय लेने की क्षमता एक साथ परखी जाती है। इसी संदर्भ में यह समझना जरूरी हो जाता है कि उनके सामने कौन-कौन सी मुख्य चुनौतियाँ आती हैं, जिन्हें निम्नलिखित पहलुओं के माध्यम से समझा जा सकता है —

(क) सदन की कार्यप्रणाली और नियमों को समझने में समय लगना, जिससे शुरुआती दौर में भागीदारी सीमित रहती है।

(ख) अनुभव की कमी के कारण बड़े और जटिल मुद्दों पर बोलने में झिझक महसूस होना।

(ग) दलगत अनुशासन के कारण व्यक्तिगत विचारों को खुलकर व्यक्त करने में कठिनाई होना।

(घ) क्षेत्रीय अपेक्षाओं और दल की नीतियों के बीच संतुलन बनाए रखना।

(ङ) वरिष्ठ विधायकों के बीच अपनी पहचान स्थापित करने का दबाव रहना।

(च) प्रशासनिक तंत्र के साथ प्रभावी समन्वय बनाने में समय लगना।

(छ) राजनीतिक भविष्य को ध्यान में रखते हुए निर्णय लेते समय अत्यधिक सावधानी बरतना।

इन्हीं चुनौतियों के कारण पहली बार चुने गए विधायकों की कार्यशैली पर असर पड़ता है और उनके सामने कई तरह की व्यावहारिक सीमाएँ भी बन जाती हैं। जब कोई विधायक इन परिस्थितियों से गुजरता है तो वह अपने व्यवहार और फैसलों में अधिक सावधानी रखने लगता है, जिससे उसकी स्वतंत्रता अपने आप कम हो जाती है।[20] ऐसी स्थिति में वह कई बार अपने विचार खुलकर व्यक्त नहीं कर पाता और अपने काम को सीमित तरीके से प्रस्तुत करता है। इस कारण यह जरूरी हो जाता है कि इन चुनौतियों से पैदा होने वाली सीमाओं को भी समझा जाए, जो निम्नलिखित है—

(क) स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता सीमित हो जाती है, जिससे विधायक अपने दल की दिशा को ध्यान में रखते हुए ही निर्णय लेते हैं।

(ख) सदन में सक्रिय भागीदारी सीमित रह जाती है, जिससे वे हर विषय पर अपनी भूमिका नहीं निभा पाते।

(ग) व्यक्तिगत विचारों को पूरी तरह व्यक्त करने में संकोच रहता है, जिससे कई मुद्दे सीमित रूप में सामने आते हैं।

(घ) दल और वरिष्ठ नेताओं पर निर्भरता बढ़ जाती है, जिससे स्वतंत्र पहचान बनने में समय लगता है।

(ङ) प्रशासनिक और राजनीतिक नेटवर्क के अभाव में क्षेत्रीय विकास कार्यों की गति प्रभावित होती है।

(च) निर्णय लेने में अधिक सावधानी के कारण पहल करने की प्रवृत्ति कमजोर पड़ जाती है।

इन चुनौतियों और सीमाओं को एक साथ देखने पर यह साफ होता है कि पहली बार चुने गए विधायक सीखने के दौर में होते हैं, जहाँ उन्हें अनुभव और परिस्थितियों के अनुसार खुद को ढालना पड़ता है। उनके सामने आने वाली समस्याएँ राजनीतिक व्यवस्था और दल की संरचना से जुड़ी होती है। इसी कारण उनका व्यवहार और उनके फैसले दोनों ही कुछ हद तक नियंत्रित और सीमित दिखाई देते हैं। इस तरह प्रस्तुत शोध-पत्र यह समझने में मदद करता है कि नए विधायकों की भूमिका एक जटिल प्रक्रिया का हिस्सा बन जाती है, जो समय के साथ धीरे-धीरे विकसित होती है।[21]

प्रथम बार एवं अनुभवी विधायकों का तुलनात्मक विश्लेषण

राजस्थान की 15वीं विधानसभा में पहली बार चुने गए और अनुभवी विधायकों के बीच अंतर उनके काम करने के तरीके

में साफ दिखाई देता है। नए विधायक शुरुआत में अपने क्षेत्र तक ही सीमित रहते हैं और वही मुद्दे उठाते हैं जो सीधे जनता से जुड़े होते हैं। उदाहरण के तौर पर, 'निवाई' से 'प्रशांत बैरवा' या 'किशनगढ़ बास' से 'दीपचन्द खैरिया' जैसे विधायक मुख्य रूप से सड़क, पानी और रोजगार जैसी स्थानीय समस्याओं पर ही अपनी बात रखते दिखाई देते हैं। इसके विपरीत, अनुभवी विधायक जैसे—'सांगोद' से 'भरत सिंह कुंदनपुर' और 'हिंडोली क्षेत्र' से 'अशोक चंदना' इन मुद्दों को बड़े स्तर से जोड़कर रखते हैं और उन्हें राज्य की नीतियों के साथ समझाते हैं। इसी कारण उनके विचार ज्यादा प्रभावशाली लगते हैं और वे चर्चा को आगे बढ़ाने में सक्षम होते हैं। इस तरह नए विधायक जहाँ सीमित दायरे में काम करते हैं, वहीं अनुभवी विधायक व्यापक सोच के साथ काम करते हैं, जिससे दोनों के बीच साफ अंतर दिखाई देता है।[22] इसी अंतर को निर्णय लेने और पहल करने की क्षमता में भी देखा जा सकता है, जहाँ अनुभवी विधायक ज्यादा सक्रिय भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के तौर पर, 'रामगंज मंडी क्षेत्र' से 'मदन दिलावर' जैसे अनुभवी विधायक अपने क्षेत्र के मुद्दों को सीधे राज्य स्तर पर उठाते हैं और प्रशासनिक स्तर पर भी हस्तक्षेप करते हैं, जबकि उसी क्षेत्र के नए विधायक अपने मुद्दों को अधिकतर पार्टी के माध्यम से आगे बढ़ाते हैं। इसी तरह 'बाँसवाड़ा क्षेत्र' के 'अर्जुन सिंह बामनिया' जैसे अनुभवी विधायक विपक्ष की भूमिका को स्पष्ट रूप से निभाते हुए सोच-समझकर विरोध करते हैं, जबकि नए विधायक उसी स्थिति में केवल समर्थन या विरोध में शामिल होते दिखाई देते हैं। इससे समझ आता है कि अनुभवी विधायक फैसलों में पहल करते हैं, जबकि नए विधायक उस प्रक्रिया का हिस्सा बनकर चलते हैं। इस अंतर को और साफ समझने के लिए नीचे दी गई तालिका में दोनों के काम करने के तरीके को तुलनात्मक रूप में दिखाया गया है —

तालिका 2 : प्रथम बार एवं अनुभवी विधायकों के कार्यों की तुलनात्मक प्रकृति

पहलू	प्रथम बार निर्वाचित विधायक	अनुभवी विधायक
कार्य करने का दायरा	सीमित, क्षेत्रीय मुद्दों तक केंद्रित	व्यापक, राज्य स्तर तक विस्तारित
निर्णय की भूमिका	दल के अनुसार निर्णय लेना	निर्णय को प्रभावित करने की क्षमता
पहल करने की प्रवृत्ति	कम, निर्देशों का पालन अधिक	अधिक, स्वयं मुद्दे उठाना
प्रशासन से संबंध	प्रारम्भिक स्तर पर सीमित संपर्क	मजबूत और स्थापित नेटवर्क
सदन में भूमिका	सुनना और सीखना प्रमुख	सक्रिय हस्तक्षेप और नेतृत्व
राजनीतिक प्रभाव	धीरे-धीरे विकसित होता है	पहले से स्थापित और प्रभावशाली

स्रोत : शोधार्थी द्वारा किया गया अध्ययन

इसी तालिका के आधार पर यदि व्यवहार को समझा जाए, तो यह साफ होता है कि नए और अनुभवी विधायकों के बीच अंतर उनके काम करने के तरीके और प्रभाव का होता है। नए विधायक अपने व्यवहार में ज्यादा सावधानी रखते हैं और कई बार अपनी बात सीमित रूप में ही रखते हैं, जबकि अनुभवी विधायक आत्मविश्वास के साथ खुलकर अपनी राय रखते हैं। उदाहरण के तौर पर, 'शेखावाटी क्षेत्र' के 'वीरेन्द्र सिंह' जैसे विधायक धीरे-धीरे अपनी भूमिका को विकसित करते हैं, जबकि अनुभवी नेता शुरुआत से ही अपना स्पष्ट रुख रखते हैं। इस तरह यह तुलना दिखाती है कि समय के साथ विधायक की भूमिका बदलती है और वह अधिक प्रभावी बनता जाता है।

निष्कर्ष

इस शोध-पत्र में राजस्थान की 15वीं विधानसभा के संदर्भ में यह समझने की कोशिश की गई कि दलगत अनुशासन किस तरह पहली बार चुने गए विधायकों के फैसलों और उनके व्यवहार को प्रभावित करता है। पूरे शोध-पत्र से यह पता चलता है कि नए विधायक ऐसे माहौल में काम करते हैं जहाँ उन्हें अपनी सोच और पार्टी की अपेक्षाओं के बीच संतुलन बनाना पड़ता है। सदन में उनके फैसले ज्यादातर सामूहिक दिशा में होते हैं और व्यक्तिगत पहल कम दिखाई देती है। व्यवहार के स्तर पर भी वे अपने शब्दों, प्रतिक्रिया और भागीदारी को नियंत्रित रखते हैं, जिससे उनका आचरण एक

तय ढाँचे में ढल जाता है। अनुभवी विधायकों की तुलना में नए विधायक अधिक सावधानी से काम करते हैं और लगातार सीखने की प्रक्रिया में रहते हैं। इस तरह यह शोध-पत्र दिखाता है कि दलगत अनुशासन केवल एक नियम होने की बजाय एक ऐसा प्रभाव है जो धीरे-धीरे विधायकों की कार्यशैली को आकार देता है और उनकी भूमिका को प्रभावित करता है।

इस शोध-पत्र के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पहली बार चुने गए विधायकों को अधिक प्रभावी भूमिका निभाने के लिए संस्थागत स्तर पर सहयोग दिया जाए। सदन की कार्यप्रणाली और निर्णय प्रक्रिया को समझाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों को और मजबूत किया जा सकता है, ताकि नए विधायक आत्मविश्वास के साथ अपनी जिम्मेदारी निभा सकें। साथ ही, दलों के भीतर ऐसा माहौल बनाना भी जरूरी होगा जहाँ विधायक अपनी बात संतुलित तरीके से रख सकें और केवल निर्देशों का पालन करने तक सीमित न रहें। अगर नए विधायकों को शुरुआत से ही संवाद और भागीदारी के अवसर मिलते हैं, तो वे अपने क्षेत्र के मुद्दों को बेहतर तरीके से सामने रख पाएंगे। इसके अलावा वरिष्ठ और नए विधायकों के बीच सहयोग बढ़ाने से अनुभव साझा करना भी संभव होगा। इस तरह छोटे-छोटे सुधारों के जरिए विधायकों की भूमिका को अधिक सक्रिय और प्रभावी बनाया जा सकता है, जिससे लोकतांत्रिक प्रक्रिया और मजबूत हो सके।

संदर्भ सूची

1. सिंह, खुशवीर, भारतीय राज्यों की राजनीति : संरचना, प्रक्रिया और परिवर्तन, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, 2021, पृ.सं. 42
2. मिश्रा, राजेश, राजनीति विज्ञान : एक समग्र अध्ययन, (सातवां संस्करण), ओरिएंट ब्लैकस्वान प्रा.लि., 2022, पृ.सं. 51
3. कश्यप, सुभाष, हमारी संसद, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, 2016, पृ.सं. 81
4. उपर्युक्त, पृ.सं. 89
5. सिंह, खुशवीर, पूर्वोक्त, पृ.सं. 78
6. मिश्रा, राजेश, पूर्वोक्त, पृ.सं. 57
7. भंडारी, विजय, राजस्थान की राजनीति : सामंतवाद से जातिवाद के भंवर में, वाणी प्रकाशन, 2023, पृ.सं. 88
8. भंडारी, विजय, पूर्वोक्त, पृ.सं. 93
9. कोठारी, राजनी, भारत में राजनीति : कल और आज, वाणी प्रकाशन, 2023, पृ.सं. 55
10. शर्मा, दिनेश राम, भारतीय शासन एवं राजनीति, रावत पब्लिकेशन, 2023, पृ.सं. 70
11. मिश्रा, राजेश, पूर्वोक्त, पृ.सं. 68
12. शर्मा, दिनेश राम, पूर्वोक्त, पृ.सं. 79
13. मिश्रा, राजेश, पूर्वोक्त, पृ.सं. 93
14. भंडारी, विजय, पूर्वोक्त, पृ.सं. 67
15. मीणा, अरविन्दराज, राजस्थान में राजनीति : दलगत परिवर्तन और नेतृत्व की प्रवृत्तियाँ, एस.बी. पब्लिकेशन, जयपुर, 2023, पृ.सं. 61
16. उपर्युक्त, पृ.सं. 65
17. मीणा, अरविन्दराज, उपर्युक्त, पृ.सं. 86
18. मीणा, जनक सिंह, राजस्थान प्रशासनिक एवं राजनीतिक व्यवस्था, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, 2021, पृ.सं. 62
19. मीणा, अरविन्दराज, पूर्वोक्त, पृ.सं. 100
20. मिश्रा, राजेश, पूर्वोक्त, पृ.सं. 98
21. उपर्युक्त, पृ.सं. 108
22. उपर्युक्त, पृ.सं. 119